

शहीदे इन्सानियत

आयतुल्लाहिल उज्जमा सैय्यदुल उलमा मौलाना सै० अली नकी नक्वी ताबा सराह

चौथा बाब

इस्लाम का मुजाहिम (मुख़ालिफ़) ताक़तों से तसादुम (टकराव)

जहाँ तक आईन और निज़ाम की तशकील का तअल्लुक है पैग़म्बरे इस्लाम की ज़िन्दगी में यह मक़सद हासिल हो गया और लाखों आदमी उसके तस्लीम करने वाले और उसको हक़ कहने वाले हो गए और यह एक इन्क़ेलाब की कोई कम कामयाबी नहीं है। मगर इस इन्क़ेलाब पैदा करने में रसूल^{स०अ०} को कितनी दिक्कतें दर पेश हुईं और किन किन ताक़तों से मुकाबला करना पड़ा। यूँ तो कुछ लोग वह होते हैं जो जज़्बात के लिहाज़ से हर क़दीम शै (पुरानी चीज़) के साथ उलफ़त रखते हैं इसलिये उन्हें हर इन्क़ेलाब के मुहरिक (बानी) से बुग़ज़ लिल्लाही होता है। इलाही बैर का मतलब यह है कि चाहे इस इन्क़ेलाब का उनकी ज़ात से कोई तअल्लुक न हो और उन्हें इससे कोई नुक़सान भी न पहुँचता हो मगर वह इन्क़ेलाब से सिर्फ़ इसलिये दुश्मनी रखते हैं कि वह इन्क़ेलाब है लेकिन कुछ लोग ऐसे भी होते हैं जिनके खुद ग़रज़ाना मफ़ाद (फ़ाएदे) क़दीम रस्मो रवाज के साथ वाबस्ता हैं और उन्हें इस इन्क़ेलाब से अपने मनाफ़े (फ़ाएदों) का खून होते हुए नज़र आता है। चुनानचे इस्लाम जो इन्क़ेलाब लेकर आया था और उसने ज़िन्दगी के हर शोबे में जो तब्दीलियाँ कर दी थीं उनसे बहुत सी किस्म

के लोगों को ज़ाती नुक़सानात पहुँच रहे थे। यह नुक़सानात माली भी थे और वजाहत (शानों शौकत) व इक्तेदार के भी। मिसाल के तौर पर इस्लाम की मआशी (मालियत) तालीम कि सूद ख़ोरी ममनूअ (मना) है, उससे क्या तमाम अरब के इन महाजनों का दीवाला नहीं निकल गया, जिनकी ज़िन्दगी ही हाजत मन्द मख़लूक का खून चूस कर अपनी हवसे दौलतमंदी को पूरा करने पर थी। फिर अगर सिर्फ़ यह होता कि सूद लो नहीं तो यह मुमकिन था कि यह लोग इस्लाम न कुबूल करके अपने को इस हुक्म की पाबन्दी से महफूज़ रखते मगर वहाँ तो यह था कि न सूद लो और न सूद दो। जाहिर है कि सूद देना काम होता है कम हैसियत ही लोगों का जो मेक़नातीसी (चुंबकीय) कशिश के साथ इस्लाम के ग़रीब परवर तालीमात की तरफ़ खिंचे चले जा रहे थे। अब अगर सरमायादार खुद इस्लाम न भी कुबूल करें तो क्या फ़ायदा। जब उनकी ज़िन्दगी का दारोमदार जिन लोगों के रूपये पर था, उन्होंने इस्लामी तालीमात पर अमल पैरा हो कर अपना हाथ खींच लिया और वह अब एक पैसा भी सूद के नाम से देने पर तय्यार नहीं। उसके अलावा इस्लाम की यह तालीम कि अफ़रादे इन्सानी में इम्तेयाज़ सिर्फ़ अख़लाके हसना (अच्छे नेचर) व फ़राएजे इलाहिया की बिना पर है। दूसरी किसी हैसियत से फ़ज़ीलत व तफ़व्वुक़ हासिल नहीं हो सकता (बरतरी हासिल नहीं हो सकती) उन लोगों के इक्तेदार पर कारी ज़र्ब थी जो उसके पहले नस्ली तफ़व्वुक़ या माल व दौलत या क़ौम व

कबीले की कसरत की बिना पर गुल्बा व इक्तेदार पर कब्जे किये हुए थे। इस्लाम ने नज़रिय-ए तफ़्बुक व इम्तेयाज़ बदल कर इसे मिलकियत में दाख़िल ख़ारिज कर दिया। इस तरह के साहेबाने इक्तेदार जितने थे वह चूँकि इस्लामी मेयारे इज़्ज़त के लिहाज़ से सिफ़र (0) का दर्जा रखते थे इसलिये वह कुछ न रहे और जो लोग परदेसी या मोहताज या उन लोगों की नज़र में नीच ज़ात के होने की वजह से निगाह उठाकर बात करने के काबिल न समझे जाते थे वह बड़े साहिबे इज़्ज़त हो गए। इसलिये कि वह अमल की कसौटी पर पुरे उतरते थे और परहेज़गारी और तक्वे में दरज-ए कमाल पर फ़ाएज़ थे। यह बात उन लोगों को ठंडे दिल से क्यों कर गवारा हो सकती थी जो अब तक इज़्ज़त की मसनदों पर इतमिनान के साथ बिराज रहे थे और जो ख़ल्के खुदा को खुदा के बदले खुद अपना गुलाम बनाये हुए थे।

बनी उमय्या के लिये इन तमाम मुहर्रेकात के अलावा उनकी देरीना मुख़ासिमत (पुरानी रंजिश) बनी हाशिम के साथ और ज़ाती रश्को हसद भी था जिसके मातहत उनके सरगिरोह अबू सुफ़यान ने तक्रीबन तमाम अरब को हज़रत मोहम्मद मुस्तफ़ा^{स०अ०} के ख़िलाफ़ बरअन्नेख़्ता (उकसाना, भड़काना) कर दिया।

आपको तरह तरह की तकलीफ़ें दी जाने लगीं। जिस्म पर पत्थर मारे गए। सर पर कूड़ा फेंका गया। निजासतें डाली गईं और क़त्ल की धमकियाँ दी गईं। यहाँ तक कि जब ख़तरा बहुत बढ़ गया तो हज़रत के चचा अबू तालिब^{अ०स०} ने आपको अपने एक महफूज़ मकान में जो पहाड़ की घाटी में एक क़ले की सूरत पर था मुन्तक़िल कर दिया। तमाम कुरैश ने बाहम एक तहरीरी मुआहेदा (Agreement) किया कि बनी हाशिम से न सिर्फ़ शादी बियाह

तर्क कर दिया जाये बल्कि उनके साथ ख़रीदो फ़रोख़्त भी न की जायेगी। इसके मातहत महसूरीन (कैदियों) तक ज़रूरियाते ज़िन्दगी, पानी और खाना तक पहुँचना तक्रीबन ग़ैर मुमकिन बना दिया गया था। यह वाक़ेया बेअसत (एलाने रिसालत) के सातवें साल का है जो चार बरस तक कायम रहा। चार बरस की तवील मुद्दत के बाद यह तर्क मवालात (दोस्ती) ख़त्म हुआ और यह लोग क़ले से बाहर निकले। अब कुछ दिन तक मुख़ालिफ़तें ठंडी रहीं मगर फिर एक ही साल के अन्दर अबू तालिब और ख़दीजा दोनों की वफ़ात¹ के बाद इस मुख़ालेफ़त ने इन्तेहाई जोर पकड़ा यहाँ तक कि अहले मदीना तक इस्लाम की रौशनी फैली और उन्होंने ने आपको मदीने की तरफ़ तशरीफ़ ले जाने की दावत दी और आपने बहुत से मुसलमानों को वहाँ भेज दिया उन्हीं मुशरकीन ने आपको क़त्ल कर देने का पूरा मन्सूबा तय्यार कर लिया। जिसके बाद आपने मदीने की तरफ़ हिजरत फ़रमाई।

मदीने में आकर भी मुख़ालेफ़ीन ने चैन से बैठने न दिया। एक तरफ़ तो उन लोगों को जो आप पर ईमान लाये थे और मजबूरन मक्के में रह गए थे तरह तरह की तकलीफ़ें पहुँचाई जातीं, दूसरी तरफ़ आप के जाए पनाह मदीन-ए-मुनव्वरा पर फ़ौज कशी के इन्तेज़ामात होने लगे। आपको अपनी हिफ़ाज़त और अपने से ज़्यादा उन लोगों के घरबार की हिफ़ाज़त के लिये जिन्होंने आपको पनाह दी थी मैदाने मुकाबला में निकल आना पड़ा।

सबसे पहली जंग जो मदीने में आकर हुई बद्र की लड़ाई थी। इस मौक़े पर मुसलमान बिल्कुल तय्यार न थे सिर्फ़ तीन सौ तेरह आदमी² जिनके पास सवार होने को सिर्फ़ तीन घोड़े थे।³ और

¹तबरी जि/1, पेज/229, ²तबरी जि/2, पेज/272

³सीरते इब्ने हिशाम जि/1, पेज/407

चन्द तलवारें। मगर बनी हाशिम की तलवार ने मुकाबिल वालों के दाँत खट्टे कर दिये। हमज़ा बिन अब्दुल मुत्तलिब^{अ०स०}, उबैदा बिन हारिस और अली इब्ने अबी तालिब^{अ०स०} ने वह कारहा—ए—नुमायाँ दिखलाये कि मुख़ालिफ़ों की हिम्मत परस्त हो गई। अगरचे इस्लाम को बिल—खुसूस बनी हाशिम को यह बड़ा नुक़सान पहुँचा कि उबैदा इस जंग में शहीद हो गए मगर मक्के वालों को और बिल—खुसूस बनी उमय्या को बहुत ज़्यादा नुक़सानात से दो चार होना पड़ा। इसमें अबू सुफ़ियान को अली बिन अबी तालिब^{अ०स०} के हाथ से महेज़ अपने बेटे हन्ज़ला के क़त्ल ही पर मातम करना नहीं पड़ा।⁴ बल्कि आपने उसके एक दूसरे बेटे अम्र को कैद भी किया।⁵ इसके अलावा उसकी बीवी हिन्द को अपने बाप अतबा और अपने चचा शैबा और भाई वलीद का मातम करना पड़ा।⁶

इसके बाद अबू सुफ़ियान ने अहद किया कि वह उस वक़्त तक नहायेगा नहीं जब तक कि रसूल^{स०अ०} पर चढ़ाई न करे। मगर अब मुशरकीन में आम तौर पर मुकाबले की हिम्मत न थी। मजबूरन अबू सुफ़ियान ने सिर्फ़ बराए नाम अपनी क़सम को पूरा करने के लिये दो सौ सवार कुरैश के इकट्ठा किये और उनको लेकर मदीने की तरफ़ रवाना हुआ। मदीने के हुदूद में पहुँच कर उसने रसूल के दो पैरों (मानने वालों) को क़त्ल कर डाला और खज़ूर के दरख़्तों को तबाह कर दिया। हज़रत अपने पैरुओं के साथ जंग के लिये निकल आये मगर अबू सुफ़ियान अपने साथियों के साथ ख़ौफ़ खा कर पहले ही फ़रार हो चुका था और सब भागने की जल्दी में अपने सामान के

गठठरों को रास्ते में फेंकते गए थे। उसमें ज़्यादा तर सत्तू बंधे हुए थे जो मुसलमानों को हासिल हुए। इसी वजह से इसको “जंगे सवीक़” कहते हैं क्योंकि अरबी में सवीक़ के मानी सत्तू के हैं।⁷

हिज़रत के तीसरे साल वह निहायत अहम लड़ाई पेश आई जिसको ओहद की जंग कहते हैं।⁸ अकरमा, बिन अबी जेहल, अबू सुफ़ियान और हिन्द को उस वक़्त तक चैन कहाँ आ सकता था जब तक कि वह मदीने वालों से इन्तेक़ाम न लेते। मक्का वालों ने बड़ी बड़ी तय्यारियाँ की थीं। उनकी फ़ौज में कुरैशियों के अलावा ख़ानदाने कनाना और बाशिन्दगाने तहामा भी शामिल थे।⁹ फ़ौज में तीन हज़ार मुसल्लेह (हथियारों से लैस) सिपाही थे।¹⁰ उनमें सात सौ ज़िरह पोश थे। उनके बिल—मुकाबिल रसूल^{स०अ०} के साथ सात सौ आदमी थे जिनमें सिर्फ़ सौ ज़िरह पोश थे और फ़ौज में फ़क़त दो घोड़े थे।¹¹ अकरमा और ख़ालिद बिन वलीद दोनो फ़ौज के अफ़सर थे और ख़ास बात यह थी कि फ़ौज के अक़ब (पीछे) में अबू सुफ़ियान की बीवी हिन्द: मक्के की दूसरी औरतों के साथ मैदाने जंग में ढोल बजा बजा कर सिपाहियों की हौसला अफ़ज़ाई कर रही थी। हिन्द: के अशआर उस मौक़े के जो वह पढ़ रही थी कुतुबे तारीख़ में महफूज़ हैं।¹²

हिन्द: के इन्तेक़ामी जज़बात का अन्दाज़ा इससे हो सकता है कि ओहद की जंग में जब रसूल^{स०अ०} के चचा हज़रत हमज़ा शहीद हुए तो हिन्द: जज़ब—ए—इन्तेक़ाम में अपनी सिन्फ़ बल्कि इन्सानियत की हुदूद से गुज़र गई।

⁴इरशाद पेज/38

⁵सीरते इब्ने हिशाम जि/1, पेज/397

⁶इब्ने हिशाम जि/2, पेज/37, तबरी जि/2, पेज/279

⁷सीरते इब्ने हिशाम जि/2, पेज/55, तबरी जि/2, पेज/299

⁸सीरते इब्ने हिशाम जि/2, पेज/65

⁹इब्ने हिशाम जि/2, पेज/68 ¹⁰इब्ने हिशाम जि/2, पेज/69

¹¹तबरी जि/3, पेज/12 ¹²तबरी जि/3, पेज/15-16

उसने इस बरबरियत का सुबूत दिया कि जनाबे हमज़ा का पहलू चाक कराके उनका जिगर निकलवाया और उसे मुँह में रख कर चबाने की कोशिश की। और कुशतों के कान और नाक वगैरह आज़ा—ए जिस्म का गुलूबन्द (गले का हार) और सीना बन्द बनाया।¹³ बल्कि बाज़ रावियों ने तो यहाँ तक बयान किया है कि उसने हज़रत हमज़ा के जिगर को भून कर खा लिया।¹⁴ उससे उस एनाद और दुश्मनी का अन्दाज़ा किया जा सकता है जो उस खानदान के मर्दों और औरतों के दिलों में बनी हाशिम, पैगम्बरे इस्लाम^{स०अ०} और इस्लाम के खिलाफ़ पाई जाती थी।

इस जंग में अगरचे आम तौर पर मुसलमानों की जमाअत में बड़ी अबतरी (कमज़ोरी) पैदा हो गई थी मगर आखिर में बनी हाशिम और बिल—खुसूस अली इब्ने अबी तालिब^{अ०स०} की तलवार ने मुख़ालिफ़ जमाअत को शिकस्त दी और वह हज़ीमत खुर्दा (बेइज़्ज़ती) सूरत में वापस गई। अब उनकी इन्फ़ेरादी ताक़त रसूल के मुक़ाबले में ना—काफ़ी साबित हो चुकी थी। इसलिये 5 हिजरी में आख़री कोशिश उन्होंने यह की कि जितनी जमाअतें मुल्के अरब में इस्लाम के खिलाफ़ उनको मिल सकती थीं सबको मुत्तहिद (एकजुट) किया। यहाँ तक कि यहूद को साज़ बाज़ करके अपने साथ मिलाया और इज्तेमाई ताक़त (एक जुट होकर) से दस हज़ार के लशकर के साथ वह इस जंग के लिये आये जिसको इसी जत्थाबन्दी की वजह से “जंगे अहज़ाब” के नाम से याद किया जाता है। उनके मुक़ाबले में मुसलमान तीन हज़ार थे मगर फ़ौजे मुख़ालिफ़ को इस मर्तबा भी शिकस्त का रोज़े बद देखना नसीब हुआ और उनका माय—ए—नाज़ सूरमा

¹³इब्ने हिशाम जि/2, पेज/84, तबरी जि/3, पेज/23

¹⁴इस्तीआब जि/2, पेज/786, तबरी जि/3, पेज/43

अम्र बिन अब्दवद इब्ने अबी कैस आमरी, अली इब्ने अबी तालिब^{अ०स०} के हाथ से तलवार के घाट उतरा।¹⁵ अबू सुफ़ियान को ब—हाले ख़स्ता व तबाह मक्का वापस जाना पड़ा और अब हिम्मत मुक़ाबला व लशकर कश ख़त्म हो गई मगर दिल में इन शिकस्तों से जो घाव पड़े थे वह कभी भी भर न सकते थे।

पैगम्बरे इस्लाम^{स०अ०} ने जब कुछ अरसे तक यह देखा कि अब मुशारेकीने कुरैश की तरफ़ से कोई जंगी कारवाई नहीं होती तो आपने सन 6 हिजरी में ख़ान—ए काबा की ज़ियारत (उमरा) का इरादा किया और मुसलमानों की जमाअत के साथ मक्के की तरफ़ रवाना हुए।¹⁶ आपके पास बुदने (कुर्बानी के ऊँट) थे।¹⁷ जिससे ज़ाहिर था कि आप लड़ाई के लिये नहीं जा रहे हैं। मगर जब कुरैश को रसूल के आने की ख़बर पहुंची तो वह ख़ालिद बिन वलीद की क़यादत में “कराउल ग़मीम” (नामी) मक़ाम तक रसूल^{स०अ०} का रास्ता रोकने के लिये निकल आये।

ज़ाहिर है कि मुसलमानों की हिम्मतें इसके पहले की हासिल शुदा पैदरपै फ़ुतूहात (जीत) से बढ़ी हुई थीं और सामने वही शिकस्त खुर्दा (हारी हुई) जमाअत थी जो इस वक़्त जंग के लिये कोई तय्यारी भी न कर सकी थी इसलिये यह बहुत आसान था कि आप मुक़ाबले का हुक्म दे देते और फ़ातेहाना सूरत से मक्के में दाख़िल होते मगर पैगम्बरे इस्लाम^{स०अ०} को अमन पसन्दी का सुबूत देना था। जूँही गर्दो गुबार उठता नज़र आया आपने फ़रमाया: इस रास्ते को छोड़ दो। किसी दूसरे रास्ते से आगे निकल चलो। चुनानचे दायें जानिब का रुख़ किया गया और आप “हमस” (नामी जगह)

¹⁵इब्ने हिशाम जि/2, पेज/112, तबरी जि/3, पेज/48

¹⁶इब्ने हिशाम जि/12, पेज/210, तबरी जि/3, पेज/71

¹⁷तबरी जि/3, पेज/72

की पुश्त पर से “सनियतुल मरार” (नामी जगह) से होते हुए हुदैबिया को जो रास्ता जाता है उधर मुतवज्जे हुए।¹⁸

आपकी इस अमन पसन्दी के मुज़ाहरे का जमाअते मुखालिफ़ को इस हद तक एहसास हुआ कि वह भी वापस चली गई, और उसने अब नामा व पयाम (ख़तो किताबत) का सिलसिला शुरू किया। चुनानचे उरवा बिन मसऊद सक्फ़ी ने आकर गुप्तगू-ए-सुलह का आगाज़ किया और हज़रत रसूले खुदा^{स०अ०} की सुलह पसन्दाना बातों से ऐसी खुशगवार फ़िज़ा कायम हुई कि सुहैल बिन अम्र कुरैश का नुमाइन्दा बनाकर गुप्तगू-ए सुलह के लिये हज़रत के पास भेजा गया और उसने अपनी जमाअत के मुतालबात पेश कर दिये, यह मुतालबात सब मुशरकीन के हक़ में थे और उनके ज़रिये से ब-ज़ाहिर पैग़म्बरे इस्लाम को दबाया जा रहा था मगर आपने इन सब बातों को मन्ज़ूर फ़रमा लिया और सुलहनामा मुरत्तब हो गया। इस सुलह नामे के शराएत हरबे ज़ैल थे।

- 1, रसूल इस साल अपने मुत्तबेईन (साथियों) के साथ बग़ैर ज़ियारत किये हुए वापस जायें।
- 2, दस साल तक आपस में जंग न हो।
- 3, जो शर्ख़्स कुरैश में से अपने वली (सरदार) की इजाज़त के बग़ैर रसूल अल्लाह^{स०अ०} के पास चला जाये उसको आप वापस कर देंगे मगर जब आपके पास से कोई निकल कर कुरैश के पास चला जाये तो कुरैश वापस न करेंगे।
- 4, जो क़बील-ए-रसूल^{स०अ०} का हलीफ़ (हिमायती) होना चाहे वह आपके साथ मुआहद-ए-दोस्ती कर ले और जो क़बील-ए-कुरैश के साथ

मुआहद-ए-दोस्ती करना चाहे वह उनके साथ हो जाये।

- 5, आइन्दा साल मुसलमान मक्के की ज़ियारत के लिये आ सकेंगे इस तरह कि बाशिन्दगाने मक्का तीन दिन के लिये मक्के को ख़ाली कर देंगे मगर मुसलमानों को लाज़िम होगा कि तीन दिन के अन्दर मक्के से बाहर निकल जायें और एक आदमी भी तीन दिन के बाद मक्का में रहने न पाये।

- 6, मुसलमान अपने साथ उस तरह के असलहे ला सकेंगे जैसे मुसाफ़िर अपने साथ रखते हैं, यानी तलवारें नियाम के अन्दर रखी हुई।¹⁹

यह ऐसी ग़ैर मुतवाज़िन (यकतरफ़ा) शर्तें थीं कि पैग़म्बरे इस्लाम^{स०अ०} के अक्सर साथ वालों में जो रसूल के बलन्द मसालेह की तह तक पहुंचने से कासिर थे। शदीद बेचैनी पैदा हो गई थी। तारीख़ के अलफ़ाज़ यहाँ तक हैं कि “लोगों के दिलों में अग्रे अज़ीम (रसूल के लिए गुमान) पैदा हुआ यहाँ तक कि क़रीब था कि वह हलाकत में मुबतिला हो जायें।” इसका मतलब यह है कि उनके अकायद में तज़लजुल (अक़ीदे में डगमगाहट) हो गया। ऐसा कि क़रीब था कि वह इस्लाम से मुन्हरिफ़ ही हो जायें।²⁰

इसी का नतीजा था कि जब पैग़म्बरे खुदा^{स०अ०} ने मुआहदे की तकमील के बाद असहाब से फ़रमाया कि उठो, कुर्बानियाँ करो और फिर सरों के बाल मुंडवा कर वापस चलो। तो आलम यह था कि रसूल^{स०अ०} हुक्म दे रहे थे और मजमे की अक्सरियत ख़ामोश थी। कोई तामील के लिए उठता न था। यहाँ तक कि जब हज़रत ने उनकी तरफ़ से बेऐतेनाई

¹⁹इब्ने हिशाम जि/2, पेज/216, तबरी जि/3,

पेज/79

²⁰तबरी जि/2, पेज/79

¹⁸तबरी जि/3, पेज/73

इख्तियार करके खुद जाकर कुर्बानी की और बाल मुंडवाये तो मजबूरन दूसरे लोग भी खड़े हुए और सरों के बाल मुंडना या तराशना शुरू किये मगर रंज और सदमे का यह आलम था कि मालूम होता था एक दूसरे को क़त्ल कर रहा है।²¹

लेकिन रसूल^{स०अ०} ने अपने साथियों के इन जज़्बात का कोई लिहाज़ न किया और कुफ़ार के इन जाबिराना शराएत को मन्ज़ूर करके वापसी इख्तियार फ़रमाई। इस ख़याल से कि अगर इस मौक़े पर जंग करके मक्के को फ़तह किया जाता तो कहने को हो जाता कि रसूले इस्लाम^{स०अ०} चढ़ाई करके आये। इस तरह जारेहाना हमला (जुल्म के साथ हमला आवर होने) का इल्ज़ाम आप पर आएद किया जाता। लिहाज़ा आपने इस का मौक़ा न दिया और सुलह के शराएत की पाबन्दी इस हद तक फ़रमाई कि अभी यह तहरीर खुशक न होने पाई थी कि खुद सुहैल बिन अम्र (जो मुशरिकीन की तरफ़ से नुमाइन्द-ए सुलह था) का लड़का जो पहले से मुसलमान हो चुका था और उसे सिर्फ़ इस्लाम लाने की वजह से घर वालों ने लोहे में जकड़ दिया था। उव वक़्त मौक़ा पाकर पा ब-ज़न्जीर होने ही की हालत में वा-मुहम्मदाह, वा-मुहम्मदाह कहता हुआ आया और अपने को रसूल के सामने डाल दिया। सुहैल ने जो यह देखा तो वह खड़ा हो गया, उसे तमांचा लगाया और गरीबान पकड़ कर खींचता हुआ ले चला। उसने पुकार कर आवाज़ दी: “क्यों मुसलमानो! क्या मैं फिर मुशरिकीन ही की तरफ़ वापस कर दिया जाऊंगा कि वह मुझे दीन से मुन्हरिफ़ करने की कोशिश करें।” मगर हज़रत^{स०अ०} ने कोई तअरूज़ (एतेराज़) नहीं फ़रमाया और कहा: “ऐ अबू जन्दल! सब्र कर यह चन्द दिन

²¹तबरी जि/3, पेज/80

की तकलीफ़ है। अल्लाह तेरे लिये और तमाम कमज़ोर मुसलमानों के लिये जो मुशरिकीन के पंजे में गिरफ़्तार हैं कोई कशाइश (आसानी) की सूरत पैदा करेगा। इस वक़्त तो हम ने इस कौम के साथ एक मुआहदा कर लिया है और इस मुआहदे की मुख़ालिफ़त हम नहीं करेंगे।”²²

गरज़ पैगम्बरे इस्लाम^{स०अ०} ने इन ग़ैर मसावियाना (ग़ैर बराबरी) शराएत पर सुलह करके मक्के से वापसी इख्तियार की और दसूरे साल मुआहदे के मुताबिक़ मक्का की ज़ियारत के लिये तशरीफ़ ले गए, मुशरिकीन ने तीन दिन के लिये शहर ख़ाली कर दिया और रसूल^{स०अ०} अपने साथियों समेत मक्के में दाख़िल हुए। मरासिमे ज़ियारत बजा लाये और फिर हस्बे मुआहदा तीन दिन के बाद मक्के को छोड़ दिया और मदीने वापस चले गए।²³

मगर मक्के वाले इसके बाद मुआहदे के दूसरे दफ़आत (दौर में) अदमे तअरूज़ वादे पर कायम नहीं रहे। मुआहदे में कबाएल (कबीले वालों) को जो इख्तियार दिया गया था कि वह जिसके साथ चाहें शरीक हो जायें। इसके मातहत कबील-ए-खुज़ाआ पैगम्बरे इस्लाम का हलीफ़ (तरफ़दार) हुआ था और बनी बक्र ने मुशरिकीन के साथ हलीफ़ (तरफ़दार) होने का एलान किया था चूँकि इन दोनों कबीलों में क़दीम अदावत थी इसलिये दोनों हमेशा एक दूसरे के ख़िलाफ़ तय्यार रहते थे।

मगर अब जो उनमें हर एक एक जानिब मुआहदे (Argument) के रू से मुन्सलिक हो गया और यह तय पा गया कि दस बरस तक जानिबैन (दोनों तरफ़ के लोगों में)

²²तबरी जि/3, पेज/79-80

²³इब्ने हिशाम जि/2, पेज/249-250, तबरी

जि/3, पेज/100-101, बुख़ारी जि/3, पेज/36, मुस्लिम

जि/2, पेज/105

में जंग न होगी तो खुज़ाआ के लोग मुतमइन हो गए। उन्होंने असलेहे जिस्म से उतार दिये और जंग की तय्यारियाँ तर्क कर दीं।

बनी बक्र ने इस मौके को ग़नीमत समझा और बनी खुज़ाआ पर इस वक़्त जब कि वह एक पानी चश्मे के किनारे मुक़ीम थे हमला कर दिया और बहुत से लोगों को क़त्ल कर डाला।²⁴ कुरैश के आदमियों ने भी ऐलानिया नहीं तो खुफ़िया बनी बक्र को मदद पहुँचाई और वह भी खुज़ाआ की तबाही के शरीक हुए। मजबूरन क़बील-ए-खुज़ाआ का एक आदमी जिसका नाम अम्र बिन सालिम था फ़रयाद करता हुआ मदीने गया और उस वक़्त जब पैग़म्बरे खुदा^{स०अ०} असहाब के दरमियान मस्जिद में तशरीफ़ रखते थे उसने इन्तेहाई दर्द अन्गोज़ अशआर में अपने क़बीले की रूदादे ग़म सुनाई जिसके आख़िर में हस्बे ज़ैल मजमून नज़्म किया गया था।

“ऐ खुदा के रसूल^{स०अ०}! आपको मालूम हो कि कुरैश ने आपसे अहद शिकनी (वादा तोड़ना) की। बनी बक्र ने हमारे क़बीले पर चश्मे के किनारे कमीनगाह से हमला कर दिया। वह समझते थे कि हमारा कोई फ़रयाद रस नहीं है। अगर हम जंग के लिये तय्यार होते तो उनकी क्या मजाल थी कि वह हमसे मुक़ाबला करते। वह तादाद में भी कम और ताक़त में भी हमारे मुक़ाबले में हमेशा सुबुक साबित हुए। मगर हम तो नमाज़े शब में मसरूफ़ थे। उन्होंने रूकू व सुजूद की हालत में आकर हम को क़त्ल कर दिया।”

इन अशआर को पढ़ने के दौरान में आपकी हमदर्दी के तअस्सुरात इतने षदीद हो गए थे कि आपने जवाब में कोई तवील कलाम सुनने के इन्तेज़ार की ज़हमत भी देना न चाही और

²⁴इब्ने हेशाम जि/2, पेज/260, तबरी जि/3,

अशआर ख़त्म होते ही आपकी ज़बान से जो जुमला निकला वह यह था कि “क़द-नसरता या अम्र बिन सालिम” (अन्क़रीब अम्र बिन सालिम की मदद होगी) इसके नतीजे में आप इतमामे हुज्जत के दरमियान कुछ मराहिल तय करने के बाद मुसलमानों को लेकर मक्क-ए-मुअज़्जेमा की तरफ़ रवाना हो गए। अब तेवर बदले हुए थे। मुशारेकीन में ताक़ते मुक़ाबला तो अब थी ही नहीं। उन्होंने हथियार डाल देने मुनासिब समझे और इसी मजबूरी के आलम में अबू सुफ़ियान ने भी ज़ाहरी तौर पर इस्लाम कुबूल कर लिया। जिसका वाक़ेया यह है कि अब्बास बिन अब्दुल मुत्तलिब और अबू सुफ़ियान में पुराने ज़माने की दोस्ती थी। इस रात को जब रसूल^{स०अ०} मक्के के करीब पहुंच चुके थे और मशरिकीन पर हिरास (ख़ौफ़) छाया हुआ था। अबू सुफ़ियान चन्द आदमियों के साथ रसूले खुदा की नक़लो हरकत का हाल मालूम करने के लिये शहर से बाहर निकला। इसी वक़्त अब्बास इस फ़िक्क में निकले थे कि अगर कुरैश ने पैग़म्बरे खुदा की मुख़ालिफ़त बरक़रार रखी तो यह सब आज मारे जायेंगे। अबू सुफ़ियान को वहाँ पा कर उन्होंने कहा, कुछ ख़बर है? रसूल^{स०अ०} दस हज़ार मुसलमानों की जमईयत (गिरोह) के साथ आये हैं, तुम उनका मुक़ाबला हरगिज़ नहीं कर सकते। अबू सुफ़ियान ने कहा फिर आपकी क्या राय है? मुझे क्या करना चाहिए? उन्होंने कहा। आओ मेरे साथ ऊँट पर बैठ जाओ और रसूल^{स०अ०} के पास चल कर अमान हासिल कर लो वरना अगर तुम उनके हाथ आगए तो बग़ैर क़त्ल किये न छोड़ेंगे। अबू सुफ़ियान को यह ज़रिया ग़नीमत मालूम हुआ वह नाके (ऊँट) पर पीछे बैठ गया और अब्बास उसे लिये हुए पैग़म्बर^{स०अ०} के पास हाज़िर हुए। रसूले खुदा से उसके लिये अमान चाही।

पैगम्बर^{स०३०} ने फरमाया कि अच्छा इस वक्त अमान है। सुबह को उन्हें फिर मेरे पास लाईयेगा। हस्बे हुक्म सुबह को अब्बास ने अबू सुफियान को हाजिर किया। हज़रत^{स०३०} ने उसको इस्लाम की दावत दी। वह पसो पेश करने लगा। अब्बास ने कहा इस्लाम कुबूल करो नहीं तो जान की ख़ैर नहीं। यह सुन कर अबू सुफियान ने इस्लाम कुबूल कर लिया।²⁵ बुख़ारी की रिवायत से ज़ाहिर होता है कि अबू सुफियान और उसके साथी जब मालूमात हासिल करने बाहर निकले तो इत्तेफ़ाक़ से लश्करे इस्लाम के पहरेदारों के हाथों में गिरफ़्तार हो गए और रसूल^{स०३०} की ख़िदमत में हाज़िर किये गए। इस वक्त अबू सुफियान ने इस्लाम कुबूल किया।²⁶ पैगम्बर^{स०३०} खुदा^{स०३०} की यह वुसअते कल्बी थी कि आपने अबू सुफियान की न सिर्फ़ जान बख़्शी फ़रमाई बल्कि एलान कर दिया कि जो अबू सुफियान के घर में पनाह ले ले उसे भी अमान है और जो मस्जिदुल हराम (काबा) में दाख़िल हो जाये उसे अमान है और जो अपने घर का दरवाज़ा बन्द करके बैठ जाये वह भी अमान में है।²⁷ दूसरी रिवायत में मस्जिदुल हराम (काबा) में दाख़िले के बजाये यह है कि जो हथियार डाल दे उसे अमान है।²⁸ और मक्के में दाख़िल होने के बाद तो आपने सब ही की जान बख़्शी कर दी। आपने मक्के के आदमियों से जो आपके सामने थे पूछा क्यों तुम्हारा क्या ख़याल है मैं तुम्हारे साथ क्या सुलूक करूँगा? उन्होंने कहा हमें नेकी ही का गुमान है। आप हमारे फ़य्याज़ भाई हैं और फ़य्याज़ भाई के बेटे हैं। फ़रमाया: **अजहबो अफ़अन्तुम तलका** “जाओ तुम सबको मैंने छोड़ दिया।”²⁹ उसके बाद अबू सुफियान की बीवी हिन्द ने

भी जिसके इन्तेक़ामी जज़बात की तस्वीर जंगे ओहद में सामने आ चुकी है। इस्लाम कुबूल किया और जितने सख़्त और मुतअस्सिब (कट्टर) एकाबिर (सरदार) कुरैश उस वक्त बाकी थे सब ही मुसलमान हो गए।³⁰ मगर मज़कूरा (ऊपर बयान किए हुए) वाक़ेयात से हर इन्सान यह सोचने पर मजबूर है कि बेबस हो जाने के बाद आदमी सर झुका सकता है, हाथ रोक सकता है, हथियार डाल सकता है, ज़बान बन्द कर सकता है लेकिन अपने दिल में तब्दीली नहीं पैदा कर सकता। अपने क़ल्ब में यकीन की सिफ़त पैदा नहीं कर सकता। और अपनी नफ़रत को मोहब्बत से तब्दील नहीं कर सकता। वह नफ़रत व दुश्मनी जो उन हुदूद तक पहुँच चुकी थी जिनका मुज़ाहरा गुज़िशता वाक़ेयात से हो चुका है क्या इस सबके बाद मोहब्बत व अकीदत से तब्दीली हो सकती है? आम उसूले फ़ितरत और वाक़ेयात की रफ़्तार के मुताबिक़ यह बात ग़ैर मुमकिन मालूम होती है। आम फ़ितरत के मुताबिक़ सिर्फ़ इतना समझा जा सकता है कि वह दुश्मन जो अब तक फुन्कारे मारते हुए अज़दहे की तरह सामने मौजूद था अब मारे आस्तीन(आस्तीन का साँप) बन कर खुफ़िया रीशी दवानियों (साज़िश रचने लगे या मुनाफ़िक़त) के लिये आज़ाद हो गया और कोई सुबह नहीं कि दुश्मन मौजूदा सूरत में पहली सूरत से ज़्यादा ख़तरनाक साबित हो सकता है। यही ख़याल था कि उनके बारे में इस्लाम के नक्क़ाद (इस्लाम की परख रखने वाले) हज़रत अली बिन अबी तालिब^{अ०स०} का। आपने फ़रमाया: “यह लोग हकीक़तन इस्लाम नहीं लाये थे बल्कि इस्लाम के सामने उन्होंने हथियार डाल दिये थे और बस।” ●

²⁵तबरी जि/3, पेज/116

²⁶बुख़ारी जि/3, पेज/29

²⁷तबरी जि/3, पेज/116

²⁸सही मुस्लिम जि/2, पेज/104

²⁹तबरी जि/3, पेज/120)

³⁰तबरी जि/3, पेज/121